मुख्य मुनि महावीरजी का जीवन परिचय

प्रो॰ (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

पाकिस्तान बॉर्डर से सटा सीमान्त जिला जैसलमेर और इस जिले का प्राचीन कस्बा फलसून्ड, जहां नजर दौड़ाएं तो रेतीले धोरों के मरूस्थल के सिवाय और कुछ भी नजर नही आता। ग्रामीण परिवेश, अतः मोटा खाना एवं मोटा ही पहनना, लेकिन सोचना बड़ा ही बारीक ढंग से, रेगिस्तान में बाजरा, गवार, मोठ, मूंग की फसल एवं गायों–भैसों, बकरियों, ऊँट–घोडों की भरमार। सुदूर मरूस्थल में आस्था एवं धर्म–ध्यान के नाम पर छोटे से मन्दिर, प्रारम्भ से इस कस्बे में कबीरपंथी गुरुओं व धंर्म आराधकों का आवागमन रहा, अतः इस नगर के हिन्दू एवं जैन धर्मावलम्बियों की आस्था पर भी कबीरपंथियों का ही वर्चस्व रहा। जैन धर्मावलम्बियों की बस्ती होने के बावजूद यह नगर जैन साधु–साध्वियों के दीर्घ सान्निध्य से अलबत्ता वंचित रहा। यही वजह है कि जैनियों का भी झुकाव कबीरपंथ की ओर बना रहा। फलसून्ड में जैन साधु–साध्वियों का आवागमन कम होने व चातुर्मास न होने के पीछे मुख्य वजह यह भी थी कि तेरापंथ बाहुल्य या तनिक भी तेरापंथ के वर्चस्वयुक्त क्षेत्र जोधपुर या फिर बाड़मेर एवं बालोतरा और इन तमाम नगरों तक की फलसून्ड से दूरी लम्बी है। अतः जैन साधु–साध्वीयों को मात्र और मात्र फलसून्ड कस्बे का लक्ष्य करके ही इस विस्तार में पधारना सम्भव हो पाता था। वैसे भी समीपवर्ती 180 किलोमीटर दूर जैसलमेर, 43 किलोमीटर दूर शेरगढ़ तथा 130 किलोमीटर दूर बाड़मेर जैसे नगरों में जैन मत के मूर्तिपूजक, स्थानकवासी, तेरापंथी जैसे सम्प्रदायों के साधु–साध्वियों का पधार पाना तो हो पाता था, लेकिन सिर्फ मार्ग में होने के कारण उनका प्रवास सिमित अवधि का ही सम्भव हो पाता था।

हालांकि तेरापंथ धर्म–संघ के अधिशास्ता आचार्यश्री तुलसी ने फलसून्ड में धर्म–संघ के विकास की असीम सम्भावनाओं को बखूबी पहचाना और इस क्रम में साध्वी भीकांजी को इस क्षेत्र को परसने हेतु निर्देश दिए। मुनि मोहनलालजी आमेट ने तो फलसून्ड क्षेत्र की तीन बार सार–सम्भाल की, जिसमें एक बार तो गुरुदेव के विशेष निर्देश पर नोखामण्डी से 500 किलोमीटर की यात्रा करते हुए फलसून्ड पधारे थे और 15 दिन बिराजकर इसी मार्ग से गंगाशहर की और प्रस्थान किया था। जबकि इस सम्पूर्ण मार्ग में फलोदी के 5–7 श्रावकों के परिवारों को अपवाद मान भी लिया जाए तो अन्य और एक भी अतिरिक्त घर भी नही है। सही मायनों में इस बंजर भूमि में आस्था के फूल खिलाने में स्व. मुनि मोहनलालजी आमेट का अथाह परिश्रम एवं योगदान रहा है। चरित्रात्माओं की यात्रा के तहत सन् 1972 में मुनिश्री वत्सराजजी विहार करते समय पधारे थे तथा उन्ही की प्रेरणा से सम्पूर्ण फलसून्ड कस्बे में जैन समुदाय से जुड़े श्रावकों ने आचार्यश्री तुलसी से गरुधारणा की थी। सन्तों के विहार के क्रम में सन् 1975 में और भी अन्य सन्त फलसून्ड कस्बे में पधारे थे। इसके अलावा समय समय पर तेरापंथी साधु–साध्वियों के विहार के दौरान सिमित अवधि के लिए पधारना होता ही रहा हैं।

सन् 1985 में मुनिश्री रोशनलालजी भी इस कस्बे में पधारे और उनका 28 दिवसीय लम्बा प्रवास रहा। इस प्रवास से जैन श्रावकों को जैन धर्म को बारीकी से समझने का सुअवसर भी मिला। हालाँकि तेरापंथ बाहुल्य के बालोतरा शहर की फलसून्ड से दूरी महज 80 किलोमीटर ही थी। बायतु भी तेरापंथ **धर्मावम्बियों** का नगर है, जो फलसून्ड से महज 64 किलोमीटर की दूरी पर ही है। लेकिन तेरापंथी साधु–साध्वियों का विहार मार्ग फलसून्ड–शेरगढ़ आदि विस्तार नही होने से फलसून्डवासियों को उनका लम्बा सान्निध्य नही मिल पाता था। इस कारण जैन होने के बावजूद वहां के निवासियों में जैन संस्कारों का बीजारोपण पूर्णरूपेण नही हो पाया। अतः प्रारम्भ के काल में वे सिर्फ जैन साधु–साध्वियों के दर्शन आदि कर इतिश्री कर लेते, जब कि वे जैन विधि से सामायिक पूजा, अर्चना आदि तक नही कर पाते थे। इन हालातों मे वे कहलाने को तो जैन थे। लेकिन संस्कारों से कबीरपंथी ही थे। लेकिन इतिहास ने करवट बदली और फलसूण्ड कस्बे का भाग्योदय का संयोग पैदा हुआ।

तेरापंथ धर्म संघ के नवम अधिशास्ता आचार्यश्री तुलसी की नजरें इस रेतीले धोरों की ओर इनायत हुई। पूज्य गुरुदेव को इस रेतीले एवं बंजर कहे जाने वाले मरूस्थल में धर्म–अध्यात्म की लहलहाते फसल नजर आई और आपश्री ने वर्ष 1989 में साध्वी रूपांजी (सरदारशहर) को साध्वी–साध्वियों के सान्निध्य से अलबत्ता महरूम रहे फलसून्ड विस्तार के श्रावकों की सार–सम्भाल के लिए भेजा। साध्वीवृंद के फलसून्ड पधारपण पर रेतीले रेगिस्तान में धर्म–अध्यात्म की बयार सी आ गई, उनका 68 दिवसीय दीर्घ प्रवास फलसून्ड वासियों के लिए आशा की किरण बना। साध्वीश्री जी के दर्शनार्थ आने वालों का ताँता सा लगने लग गया। संस्कारों से कबीरपंथी रहे जैन धर्मावलम्बियों को अपने स्वंय के जैन धर्म के दर्शन की बारिकियों समझ आने लगी और वे धीरे–धीरे कबीरपंथ की बजाय जैन–पद्धति से अपनी आराधना करने लगे। विशेष बिन्दू यह भी था कि फलसून्ड के जैनी किस सम्प्रदाय से सम्बंधित थे, यह महत्व का प्रश्न नही रहा ? साध्वीश्री रूपांजी के फलसून्ड में बिराजने से अधिकांश जैनियों का झुकाव तेरापंथ की और होने लगा।

उनके दर्शनार्थ आने वालों में एक श्री सवाईचन्द्र जी कोचर का परिवार भी था। अपने मकान के समीप ही बिराजी साध्वीश्री रूपांजी के जब वे दर्शनार्थ आते तो अपनी अर्धांगिनी छगनीदेवी तथा अपने दो वर्षीय बालक महावीर को साथ में लेकर आते। महावीर तो दो–दो घण्टे तक साध्वीजी के प्रवास स्थल पर रह जाता। 4 भाइयों एवं 4 बहिनों में सबसे छोटे महावीर को बड़ी ही सहजता से बड़ों की तरह यह भी भान हो जाता कि उसे साध्वियों से तनिक दूरी बना कर रखनी चाहिए एवं उनके गोचरी के पात्र या पूंजनी आदि वस्तुओं को भी नही छुना है। अबोध महावीर की इस विरल एवं आश्चर्यजनक समझ से साध्वी रूपांजी काफी प्रभावित हुई और उन्होंने महावीर के बारे में अपने मुखारविन्द से यह भविष्यवाणी भी कर डाली की यह लड़का बड़ा ही विलक्षण बुद्धि का है, अतः यह बड़ा होकर अपने कुल का नाम अवश्य रोशन करेगा। साध्वीश्री रूपांजी ने महावीर की दिव्यता को देख कविता की निम्न पक्तियां भी रची थी –

महावीर है संस्कारी, सूरत है प्यारी–प्यारी।

सवाईचन्दजी रो लाल लाडलो, कोचर कुल उजियारो।।

बा–बा करतो आवतो, दो–दो घण्टा रह जातो।

नन्ही सी, छोटी सी जान, पर संगटो नही करवातो।।

साध्वी रूपांजी के 62 दिवसीय सान्निध्य से फलसून्ड के कबीरपंथी रंग में रंगे जैनियों की सारी फिजा बदल चुकी थी। उनमें अपने स्वंय के धर्म के संस्कारों का रूपांतरण हो चुका था। एक तरह से उनकी वास्तविक घर वापसी हो गई थी। यह फलसून्ड नगर के निवासियों की विरल विशेषता है कि यहां जैन साधु–सन्तों के प्रवचन श्रवण हेतु सभी जाति–धर्म के श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि एक समय वह भी आया जब फलसून्ड निवासी जैनों ने साध्वी रूपांजी से एवं पूर्व में मुनि वत्सराजजी से प्रेरणा पाकर तेरापंथ धर्म संघ के अधिशास्ता पूज्यप्रवर आचार्यश्री तुलसी के सान्निध्य में पहुँचकर तेरापंथ धर्म संघ के प्रति गहन आस्था दर्शाते हुए गुरुधारणा भी कर डाली और उनका तेरापंथ धर्म संघ के श्रद्धाशील श्रावकों में समावेश हो गया। आज वहां का श्रावक समाज नियमित रूप से गुरु दर्शनार्थ जाता है। पूज्य गुरुदेव ने फलसून्ड के श्रावक–श्राविकाओं की अथाह श्रद्धा को पहचानते हुए अपनी आज्ञानुवती साध्वी राकेशकुमारीजी को चातुर्मास फलसून्ड की उर्वरा धरा पर करना फरमाया। फलसून्डवासियों के लिए यह चातुर्मास किसी स्वर्णिम अवसर से कम नही था। क्योंकि फलसून्ड में अतीत सें किसी भी सम्प्रदाय के जैन–साधु साध्वियों के चातुर्मास का यह पहला अवसर था।

साध्वीश्री राकेशकुमारी जी के चातुर्मास के दौरान ही फलसून्ड का तेरापंथ समाज आचार्य महाप्रज्ञजी के दर्शनार्थ गंगाशहर पहुंचा और पूज्य प्रवर से सविनय अर्चना की कि आपकी सिवांची–मालाणी यात्रा अवधि में जोधपुर से बालोतरा के विहार के दौरान अहिंसा यात्रा का मार्ग आप तेरापंथ धर्म संघ के नव विकसित हुए फलसून्ड नगर होकर निर्धारित करें। भले ही आप स्वंय का, युवाचार्यश्री महाश्रमणजी, या साध्वीप्रमुखाश्रीजी का ही पदार्पण हो, ऐसी कृपा कराएं। फलसून्डवासियों की इस अर्ज में सिवांची–मालाणी के श्रावक–श्राविकाओं ने स्वर में स्वर मिलाते हुए इस अर्ज को और बलवती बना दिया। इस अवसर पर मेधावी प्रतिभा के धनी महावीर के साथ समस्त फलसून्डवासियों ने संयुक्त स्वरों में मधुर गीतिका प्रस्तुत की, जो सभी ने इतनी सराही कि वन्स मोर, वन्स मोर की आवाजें गूंजने लगी। इस पुरजोर अर्ज के पश्चात् श्रद्धेय आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने फलसून्डवासियों को कसोटी पर कसते हुए फरमाया कि फलसून्ड वाले मांग कर रहे हैं, लेकिन धर्म–संध को एक दो सिंघाड़े अर्पित भी करो, फिर देखो, हर वर्ष साधु–साध्वियों के चातुर्मास मिलने लग जाएंगे। इस प्रेरणा पर फलसून्ड वासियों ने महावीर को अपने कन्धे पर बिठाकर गुरुदेव का ध्यान आकर्षित किया। बस वहाँ से महावीर के मन में वैराग्य के अंकुर प्रस्फुटित हुए और जब गुरुदेव की अहिंसा यात्रा का कारवां जोधपुर पहुंचा तो महावीर इस यात्रा का हमसफ़र बन जसोल तक साथ रहा।

बहरहाल विक्रम संवत् 2045 के प्रथम ज्येष्ठ सुदी 5 को फलसून्ड के कोचर कुल में जन्मे मेधावी महावीर में रूपांतरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी थी। उसको इस मिथ्या व

भौतिक जगत् की सच्चाई का भान होने लग गया था। जैसे–जैसे महावीर की उम्र बढ़ने लगी, वैसे–वैसे वह अपने गन्तव्य की ओर आगे बढ़ता रहा। मानो यह संस्कार तो उन्हें जन्म–जन्मांतर से ही मिले हों। गुरुदेव के जसोल प्रवास के दौरान इस नन्हीं उम्र के महावीर ने हजारों–हजारों श्रावक समुदाय की उपस्थिति में गुरुदेव के समक्ष अपने अंतर्मन के भाव रखे और उन्हीं निर्मल एवं पवित्र भावों के अनुरूप अपने वैराग्य की भावना को प्रकट किया, और शीघ्र से शीघ्र दीक्षा के आदेश फरमाने हेतु सविनय अनुरोध किया। महावीर के हृदय की अंतर्मन बनी बुलन्द आवाज से श्रावक समुदाय आश्चर्य चकित रह गया। साधु–साध्वियों के सान्निध्य से कई–कई दशकों तक वंचित रहे, या यूं कहें कि बंजर भूमि का यह बालक कितने साहस का परिचय दे रहा है ?

बहरहाल गुरुदेव ने महती कृपाकर बाड़मेर जिले के कल्याणपुर कस्बे मे महावीर के पिता की आज्ञा के पश्चात् महावीर की दीक्षा के आदेश दे दिए। यह दीक्षा जसोल कस्बे में 3 मार्च 2002 को सपन्न हुई, और साढे बारह वर्ष की उम्र में महावीरकुमार से वे महावीर मुनि बन कर धर्म संघ के यश एवं कीर्ति में चार चाँद लगा रहे हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि सम्पूर्ण जैसलमेर जिले के 250 वर्ष के इतिहास में तेरापंथ ही नहीं किसी भी सम्प्रदाय में यह पहली दीक्षा थी। यह भी उल्लेखनीय है कि आचार्यश्री ने वर्ष 2012 के जसोल चातुर्मास की सम्पन्नता के पश्चात् महावीर मुनि को साथ रखकर फलसून्ड की चार दिवसीय एतिहासिक यात्रा की थी। शांत, विनम्र, प्रबुद्ध व्यक्तित्व के धनी महावीर मुनि की आवाज बड़ी ही सुरीली है। उनके द्वारा सुनाए जाने वाले मंगलपाठ का श्रवणकर मन को आलोकिक अनूभति होती है। किसी ने ठीक ही कहा हैं कि प्रतिभा के बल पर व्यक्ति असीम ऊचाइयों को हासिल कर सकता है। पूज्यप्रवर आचार्यश्री महाश्रमणजी की पारखी नजरों ने मरूस्थल से उभर कोहिनूर को पहचाना, उसे कसोटी पर कसा और उन्हें मुख्य मुनि के रूप में मनोनीत किया। सचमुच में फलसून्ड के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में एक नया अध्याय लिखा गया है। सम्पूर्ण जोधपुर संभाग, जैसलमेर जिला एवं सिवांची–मालाजी क्षेत्र आचार्यश्री महाश्रमणजी या चिर ऋणी रहेगा। फलसून्ड का कोचर परिवार गुरुदेव के प्रति कृतदूता ज्ञापित करना है। गुरुदेव चिरायु हों, दीघार्यु हों तथा युगों 2 तक तेरापंथ धर्मसंघ की शासना करते रहें।